3. योगदर्शन

- योगदर्शन के प्रणेता **महर्षि पतञ्जलि** हैं।
- योग शब्द युज् + घञ् से बना है जिसका अर्थ है- समाधि।
- 'योगसूत्र' के लेखक **महर्षि पतञ्जलि** हैं।
- योगदर्शन का आधार योगसूत्र है।
- योग को **'सेश्वरसांख्य'** कहा जाता है क्योंकि यह ईश्वरतत्त्व को मानता है।
- योगसूत्र पर व्यास ने एक भाष्य लिखा है जिसे **योगभाष्य** कहा जाता है।
- **योगसूत्र में चार पाद हैं-**

  समाधिपाद साधनपाद विभूतिपाद कैवल्यपाद

  51 + 55 + 55 + 34= 195 सूत्र

1. समाधिपाद में- योग तथा समाधि के स्वरूप तथा भेदों का वर्णन।
2. साधनपाद में - योगप्राप्ति के साधन तथा अष्टाङ्गयोगाङ्गों का वर्णन।
3. विभूतिपाद में- योग से प्राप्त सिद्धियों का वर्णन।
4. कैवल्यपाद में- मोक्ष का वर्णन है।

- योगदर्शन में पदार्थों (तत्त्वों) की संख्या 26 है।
- योगदर्शन पर लिखा गया प्राचीन एवं सर्वप्रथम भाष्य व्यास कृत **व्यासभाष्य** है।
- वाचस्पतिमिश्र ने योगसूत्र पर **'तत्त्ववैशारदी'** नाम की टीका लिखी है।
- योगसूत्र तीन प्रमाण मानता है।

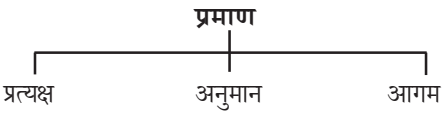

- विज्ञानभिक्षु ने योगसूत्र पर **योगवार्तिक** नामक टीका लिखी है।
- व्यासभाष्य में योग के भेद हैं-

  1. वितर्कानुगत 2. विचारानुगत 3. आनन्दानुगत 4. अस्मितानुगत

  * **वितर्कानुगत-** जिसमें ध्येय विषय के स्थूल रूप का सम्प्रज्ञान होता है।
  * **विचारानुगत -** जिसमें ध्येय विषय के सूक्ष्म रूप का सम्प्रज्ञान होता है।
  * **आनन्दानुगत -** जिसमें ध्यानकारिणी बुद्धि से स्वतः स्फूर्त आनन्द का सम्प्रज्ञान होता है।

* **अस्मितानुगत** - जिसमें बुद्धि और पुरुष की प्रतीयमान एकाकारता से प्रकट होने वाले उभय-स्वरूप विवेक का सम्प्रज्ञान होता है।

- योगदर्शन का पहला सूत्र **'अथ योगानुशासनम्'** है।
- 'अथ योगानुशासनम्' सूत्र में 'अथ' पद का अर्थ है- अधिकार-वाचक।
  'अथ इति अयम् शब्दः = अधिकारार्थः'
- योग का लक्षण है-योगश्चित्तवृत्तिनिरोधः (1/2)
  चित्त की वृत्तियों के निरोध को ही योग कहते हैं।
- 'योगश्चित्तवृत्तिनिरोधः' सूत्र से चित्त पद से अभिप्राय अन्तःकरण (मन, बुद्धि और अहङ्कार) से है।
- चित्त की पाँच भूमियों या अवस्थाओं का उल्लेख प्राप्त होता है।

चित्तभूमियाँ (पाँच)

क्षिप्त	मूढ	विक्षिप्त	एकाग्र	निरुद्ध
रजोगुण	तमोगुण	सत्वगुण का आधिक्य	सात्विक	राजस्+तामस्+ सत्व का निरोध

- चित्तवृत्तियाँ भी पाँच प्रकार की होती हैं- प्रमाणविपर्ययविकल्पनिद्रास्मृतयः (1/6)

चित्तवृत्तियाँ - (5)

प्रमाण विपर्यय विकल्प निद्रा स्मृति

- प्रमाण नामक वृत्ति के भेद हैं- तीन
  1. प्रत्यक्ष 2. अनुमान 3. आगम (शब्द)
  'प्रत्यक्षानुमानागमाः प्रमाणानि' (1/7)
- **विपर्यय-विपर्ययो मिथ्याज्ञानमतद्रूपप्रतिष्ठम्** (1/8)
  ज्ञेय वस्तु से भिन्न अर्थ में प्रतिष्ठित मिथ्याज्ञान विपर्यय कहा जाता है।
- विपर्यय का अर्थ है- मिथ्याज्ञान अथवा अविद्या
  विपर्यय या अविद्या के पाँच पर्व/क्लेश/अङ्ग भी बताये गये हैं।
- **पञ्चक्लेश-अविद्याऽस्मितारागद्वेषाभिनिवेशाः पञ्च क्लेशाः।**
  1. अविद्या 2. अस्मिता 3. राग 4. द्वेष 5. अभिनिवेश
- **विकल्प - शब्दज्ञानानुपाती वस्तुशून्यो विकल्पः** (1/9)
  शब्द से उत्पन्न जो ज्ञान, उसके पीछे, चलने का जिसका स्वभाव हो और जो वस्तु की सत्ता की अपेक्षा रखता हो, इसप्रकार का ज्ञान 'विकल्प' कहलाता है।

- **निद्रा-अभावप्रत्ययालम्बना वृत्तिर्निद्रा (1/10)**
  जाग्रत तथा स्वप्नावस्था की वृत्तियों के अभाव के कारणभूत तमोगुण को विषय बनाने वाली वृत्ति निद्रा कही जाती है।
- **स्मृति- अनुभूतविषयासम्प्रमोषः स्मृतिः**। (1/11)
  अनुभव किये हुऐ विषय का फिर चित्त में तन्मात्र विषयक- ज्ञान होना 'स्मृति' कहलाता है।
- पाँचो वृत्तियों के निरोध का उपाय है-अभ्यास और वैराग्य
  अभ्यास- अभ्यासवैराग्याभ्यां तन्निरोधः।। (1/12)
  स्थिति के निमित्त प्रयत्न करना ही अभ्यास है।
- **'दृष्टानुश्रविकविषयवितृष्णस्य वशीकारसंज्ञा वैराग्यम्'** (1/15)
  ऐहिक और पारलौकिक विषयों से निःस्पृह चित्त का 'वशीकार संज्ञा' नामक अपर वैराग्य होता है।

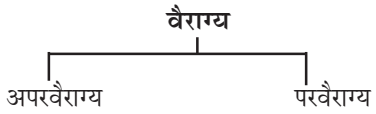

- **तत्परं पुरुषख्यातेर्गुणवैतृष्ण्यम्** (1/16)
- पुरुष की ख्याति के कारण गुणों के प्रति जो उपेक्षाबुद्धि होती है, वही परवैराग्य है।
- समाधि दो प्रकार की है- सम्प्रज्ञात और असम्प्रज्ञात
- **वितर्कविचारानन्दा स्मितानुगमात्सम्प्रज्ञातः** (1/17)
  वितर्क, विचार, आनन्द और अस्मिता का अनुगम होने से सम्प्रज्ञातसमाधि होती है।
- **असम्प्रज्ञात का लक्षण**- विरामप्रत्ययाभ्यासपूर्वः संस्कारशेषोऽन्यः (1/18)
  सभी वृत्तियों के अस्त हो जाने पर चित्त का निरोध संस्कारमात्र शेष निरोध-असम्प्रज्ञात समाधि है।
- असम्प्रज्ञात समाधि के दो प्रकार हैं -
  (1) उपायप्रत्यय (2) भवप्रत्यय
- असम्प्रज्ञात समाधि को 'निर्बीज समाधि' भी कहते हैं।
- 'भवप्रत्यय' असम्प्रज्ञातसमाधि विदेहों तथा प्रकृतिलीनों की होती है।
  'भवप्रत्ययो विदेहप्रकृतिलयानाम्'(1/19)
- ईश्वरप्रणिधान से भी असम्प्रज्ञात समाधि सम्पाद्य होती है। **'ईश्वरप्रणिधानाद्वा'** (1/23)
- ईश्वर की भक्ति विशेष से असम्प्रज्ञातसमाधि और कैवल्य की सिद्धि निकटतम हो जाती है।
- **ईश्वर का लक्षण - क्लेशकर्मविपाकाशयैरपरामृष्टः पुरुषविशेष ईश्वरः।** (1/24)
  'ईश्वर' - क्लेश, कर्म, विपाक और आशय वासनाओं के परामर्श से रहित एक

विशेष प्रकार का पुरुष है।

- 'सर्वज्ञता का बीज अपनी पराकाष्ठा को प्राप्त होता है' - **तत्र निरतिशयं सर्वज्ञबीजम्** (1/25)
- 'प्रणवः' किसका वाचक है ?- ईश्वर का
- क्लेशः - अविद्यादि पाँचों क्लेश

  कर्म- कर्मसंस्कार धर्माधर्मरूप

  विपाकः- कर्मफलानि, कर्म से मिलने वाले फल जाति, आयु और भोगरूप फल।

  आशय- चित्ते आ समन्तात् शेते इति वासना संस्कारः आशयः। चित्त में सब ओर से ग्रथित रहने के कारण इन वासना संस्कारों को 'आशय' कहते हैं।

  अपरामृष्टः - असंस्पृष्ट नाममात्र के भी सम्बन्ध अर्थात् सम्पर्क से रहित।
- ईश्वर का अभिधायक शब्द है- ओंकार
- ओंकार जप के पश्चात् करना चाहिए- योगसाधना
- योगसाधना के पश्चात् करना चाहिए- जप
- जप और योग की सिद्धि से साक्षात्कार होता है- परमात्मा का
- **चित्त के विक्षेप-**व्याधि, स्त्यान, संशय, प्रमाद, आलस्य, अविरति, भ्रान्तिदर्शन, अलब्धभूमिकत्व और अनवस्थितत्व। ये ही विघ्न भी है।

  व्याधिस्त्यानसंशयप्रमादाऽऽलस्याऽविरतिभ्रान्तिदर्शनाऽलब्ध-भूमिकत्वाऽनवस्थितत्वानि चित्तविक्षेपास्तेऽन्तरायाः(1/30)
- ये नव विघ्न ही चित्त के विक्षेप हैं।
- दुःख, दौर्मनस्य, अङ्गकम्पन, श्वास और प्रश्वास ये साथी हैं- विक्षेपों के

  दुःखदौर्मनस्याङ्गमेजयत्वश्वासप्रश्वासा विक्षेपसहभुवः। (1/31)

  उन (विघ्नों) को दूर करने के लिये किसी एक तत्व का अभ्यास करना चाहिए।

  तत्प्रतिषेधार्थमेकतत्त्वाभ्यासः (1/32)
- प्राणों का रेचक पूरक तथा कुम्भक करने से भी चित्त प्रसन्न होता है।

  'प्रच्छर्दनविधारणाभ्यां वा प्राणस्य' (1/34)

  उरस्थ वायु को नाक के नथुनों से विशिष्ट प्रयत्न के द्वारा निकालना प्रच्छर्दन है। 'विधारण' प्राणायाम पूरक और कुम्भक है।
- श्रेष्ठमणि के समान क्षीणवृत्तियों वाले तथा ग्रहीता, ग्रहण और ग्राह्य विषयों में स्थित होने वाले चित्त का उनके आकार को ग्रहण कर लेना समापत्ति है।

  'क्षीणवृत्तेरभिजातस्येव मणेर्ग्रहीतृग्रहणग्राह्येषु तत्स्थतदञ्जनता समापत्तिः' (1/41)
- समापत्ति + (सम् + आङ् + पद् + क्तिन्) से बना है।

  समापत्ति - सम्यक् प्रकार से सब ओर से हो जाना।
- समापत्तियाँ चार हैं-

  1. सवितर्का 2. निर्वितर्का 3. सविचारा 4. निर्विचारा

- सवितर्का, निर्वितर्का, सविचारा, निर्विचारा ये चारों समापत्तियाँ ही सबीज समाधियाँ हैं। **'ता एव सबीजः समाधिः' (1/46)**
- ऋतम्भरा प्रज्ञा तथा तज्जन्य संस्कार सबका निरोध हो जाने से निर्बीज समाधि सिद्ध होती है। **'तस्यापि निरोधे सर्वनिरोधान्निर्बीजः समाधिः' (1/51)**
- तपस्या स्वाध्याय और ईश्वरप्रणिधान क्रियायोग हैं।
  'तपः स्वाध्यायेश्वरप्रणिधानानि क्रियायोगः (2/1)

क्रियायोग

1. तप 2. स्वाध्याय 3.ईश्वरप्रणिधान

- 1. चित्त की प्रसन्नता को बाधित न करने वाली स्थिति **तप** है।
  2. शास्त्रों के द्वारा ओङ्कार इत्यादि पवित्र मन्त्रों का जप करना **स्वाध्याय** है।
  3. सभी क्रियाओं को परम गुरू ईश्वर में अर्पित करना या उन कर्मों के फलों का संन्यास **ईश्वरप्रणिधान** है।
- अविद्या, अस्मिता, राग, द्वेष, और अभिनिवेश ये पाँच क्लेश होते हैं।
  अविद्याऽस्मितारागद्वेषाभिनिवेशाः पञ्च क्लेशाः। (2/3)
  भाष्यकार के अनुसार पाँच क्लेशों का अर्थ है-पाँच प्रकार के विपर्यय या मिथ्याज्ञान।
- प्रसुप्त, तनु, विच्छिन्न और उदार इन चारों अवस्थाओं में रहने वाले 'अस्मिता' इत्यादि चारों परवर्ती क्लेशों की प्रसवभूमि अविद्या है।
  अविद्या क्षेत्रमुत्तरेषां प्रसुप्ततनुविच्छिन्नोदाराणाम्। (2/4)
- अनित्य, अपवित्र, दुःखमय और अनात्मपदार्थों में क्रमशः नित्य, पवित्र, सुखमय और आत्मा का ज्ञान होना अविद्या है।
  'अनित्याऽशुचिदुःखानात्मसु नित्यशुचिसुखात्मख्यातिरविद्या।' (2/5)
  अनित्य पदार्थ में नित्यपदार्थ का ज्ञान अविद्या है जैसे-पृथ्वी नित्य या स्थायी है। चन्द्रमा और तारों सहित द्युलोक नित्य है।
  'अविद्या' शब्द में 'नञ्' तत्पुरुष समास = न विद्येति अविद्या।
- दृकशक्ति पुरुष और दर्शनशक्ति बुद्धि की प्रतीयमान एकात्मता अस्मिता नामक क्लेश है। **'दृग्दर्शनशक्त्योरेकात्मतेवास्मिता'** (2/6)
  सुख के अनुभविता को सुखानुभव की स्मृतिपूर्वक सुख या सुख के साधनभूत पदार्थ के प्रति जो चाह लालच या लोलुपता होती है वह राग नामक क्लेश है।
- इसका लक्षण - **'सुखानुशयी रागः'** (2/7)
  सुखस्य अनुशयी इति सुखानुशयी

- दुःख के अनुभविता को दुःखानुभव की स्मृतिपूर्वक दुःख या दुःख के साधनभूत पदार्थ के प्रति जो प्रतिहिंसा, मन्यु, मारने की इच्छा या क्रोध होता है, वह द्वेष है।
  'दुःखानुशयी द्वेषः' (2/8)
  अनुशयी - अनु +शीङ् +णिनिः = अनुशयी
- संस्काररूप से स्थिर, विद्वानों में भी उसीप्रकार से वर्तमान क्लेश अभिनिवेश है।
  स्वरसवाही विदुषोऽपि तथारूढोऽभिनिवेशः (2/9)
  अभिनिवेश नामक क्लेश स्वभावतः वर्तमान में रहने वाला उत्पन्न मात्र हुए कीट को भी प्रत्यक्ष, अनुमान और आगम प्रमाणों के द्वारा अज्ञेय, आत्मनाश की कल्पनारूप मरण का भय है।
- स्वस्य रसः इति स्वरसः तं वोढुं शीलमस्येति स्वरसवाही स्वरस + वह + णिनिः
- अपने मौलिक रूप को सदा अक्षुण्ण रखने वाला या संस्कार से सदैव वर्तमान रहने वाला। **'स्वरसवाही स्वरसेन संस्कारमात्रेण वहतीति स्वरसवाही'**
- अभिनिवेशः मरणभयम् - मरने का डर ही अभिनिवेश है।
- पाँच क्लेशों की वृत्तियाँ क्रियायोग से हल्की तथा विवेकख्याति के द्वारा नष्ट की जाने योग्य होती है। **''ध्यानहेयास्तद्वृत्तयः''** (2/11)
- क्लेशरूपी मूल के रहने पर जन्म, आयु और भोग रूपी कर्माशय के फल प्राप्त होते हैं। **सति मूले तद्विपाको जात्यायुर्भोगाः** (2/13)
- भविष्यकालिक दुःख ही 'हेय' है। **हेयं दुःखमनागतम्** (2/16)
  द्रष्टा और दृश्य का संयोग हेय का हेतु है। **द्रष्टृदृश्ययोः संयोगो हेयहेतुः।** (2/17)
- अविद्या के मिट जाने से संयोग का नाश हो जाना 'हान' है वही पुरुष का 'कैवल्य' है।
  तद्भावात्संयोगाभावो हानं तद्दृशेः कैवल्यम्। (2/25)
- मिथ्याज्ञानशून्य विवेकख्याति ही हान का उपाय है। **विवेकख्यातिरविप्लवा हानोपायः (2/26)**
- विवेकख्याति योगी की उत्कृष्ट स्तरवाली प्रज्ञा सात प्रकार की होती है। **तस्य सप्तधा प्रान्तभूमिः प्रज्ञा** (2/27)
- योग के अङ्गों का अनुष्ठान करने से, अशुद्धि का क्षय हो जाने पर विवेकख्याति के उदय तक ज्ञान का प्रकाश होता जाता है।
  योगाङ्गानुष्ठानादशुद्धिक्षये ज्ञानदीप्तिराविवेकख्यातेः। 2/28
- **अष्टाङ्गयोग-** यम, नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान और समाधि ये आठ योग के अङ्ग हैं।
  यमनियमाऽऽसनप्राणायामप्रत्याहारधारणाध्यानसमाधयोऽष्टावङ्गानि (2/29)

- **यमाः** - अहिंसादयः पञ्च, अहिंसा इत्यादि पाँच यम हैं।
  अहिंसासत्यास्तेयब्रह्मचर्यापरिग्रहाः यमाः (2/30)
  अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य और अपरिग्रह ये पाँच यम कहे जाते हैं।
- अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य और अपरिग्रह में से प्रथम अहिंसा को बताते हैं।
- **अहिंसा-** सब प्रकार से सदैव सब प्राणियों को पीड़ा न पहुचाना अहिंसा है।
  'तत्राहिंसा सर्वथा सर्वदा सर्वभूतानामनभिद्रोहः।'
  सत्य- जैसा देखा गया या अनुमित किया गया या सुना गया हो उसके सम्बन्ध में वैसी ही वाणी और वैसा ही मन रखना 'सत्य' है। **'सत्यं यथार्थे वाङ्मनसे'**
- **अस्तेय-** शास्त्राज्ञा के विपरीत दूसरों का द्रव्य ग्रहण करना 'स्तेय' है।
  स्तेयमशास्त्रपूर्वकं द्रव्याणां परतः स्वीकरणम्।
  इसप्रकार की इच्छा का अभाव रूप स्तेयाभाव 'अस्तेय' है।
  तत्प्रतिषेधः पुनरस्पृहारूपमस्तेयमिति।
- **ब्रह्मचर्य-** गुप्तेन्द्रिय अर्थात् जननेन्द्रिय का निग्रह 'ब्रह्मचर्य' है।
  'ब्रह्मचर्य गुप्तेन्द्रियस्योपस्थस्य संयमः।'
- **अपरिग्रह-** विषयों की प्राप्ति रक्षा और तद्विषयक आसक्ति तथा हिंसादि दोषों के कारण उन विषयों को स्वीकार न करना 'अपरिग्रह' है।
  विषयाणामर्जनरक्षणक्षयसङ्गहिंसादोषदर्शनादस्वीकरणमपरिग्रह इत्येते यमाः।
- जाति, देश, काल और आचार परम्परा से सीमित न होते हुए ये यम सार्वभौम **'महाव्रत'** कहे जाते हैं।
  'जातिदेशकालसमयानवच्छिनाः सार्वभौमा महाव्रतम्' (2/31)
- **नियम -** शौच, सन्तोष, तप, स्वाध्याय और ईश्वरप्रणिधान नियम कहे जाते हैं।
  शौचसन्तोषतपःस्वाध्यायेश्वरप्रणिधानानि नियमाः (2/32)
- **ईश्वरप्रणिधन-** गुरू या ईश्वर के प्रति सभी कर्मों का अर्पण करना ईश्वरप्रणिधान है।
  ईश्वरप्रणिधानं तस्मिन् परमगुरौ सर्वकर्मार्पणम्।
- अहिंसा के प्रतिष्ठित हो जाने पर उस योगी के पास प्राणियों का पारस्परिक वैरभाव छूट जाता है। **अहिंसाप्रतिष्ठायां तत्सन्निधौ वैरत्यागः।** (2/35)
- **सत्यप्रतिष्ठायां क्रियाफलाश्रयत्वम्** (2/36)
  सत्य के प्रतिष्ठित वितर्कशून्यतया स्थिर हो जाने पर उस साधक में शुभाशुभ क्रियाओं और उनके फलों की आश्रयता आ जाती है।
- अस्तेय के प्रतिष्ठित हो जाने पर सभी रत्नों की उपस्थिति होती है।
  अस्तेयप्रतिष्ठायां सर्वरत्नोपस्थानम् ' (2/37)

- ब्रह्मचर्य के प्रतिष्ठित हो जाने पर सामर्थ्य लाभ होता है।
  ब्रह्मचर्यप्रतिष्ठायां वीर्यलाभः (2/38)
- अपरिग्रह के स्थित होने पर भूत, वर्तमान और भविष्य के जन्मों तथा अनेक प्रकार का सम्यग्ज्ञान होता है।
  अपरिग्रहस्थैर्ये जन्मकथन्तासम्बोधः (2/39)
- शौच के स्थिर होने से अपने अङ्गों के प्रति घृणा और अन्य प्राणी के अङ्गों से संसर्गाभाव होता है।
  शौचात् स्वाङ्गजुगुप्सा परैरसंसर्गः (2/40)
- बुद्धिशुद्धि से मन की प्रसन्नता एकाग्रता इन्द्रियों पर विजय और आत्मसाक्षात्कार की योग्यता आती है।
  सत्त्वशुद्धिसौमनस्यैकाग्र्येन्द्रियजयात्मदर्शनयोग्यत्वानि च (2/41)
- सन्तोष के स्थित होने से निरतिशय सुख की प्राप्ति होती है।
  सन्तोषादनुत्तमसुखलाभः (2/42)
- स्वाध्याय के स्थिर होने से इष्ट देवताओं का सम्पर्क होता है।
  स्वाध्यायादिष्टदेवतासम्प्रयोगः (2/44)
- ईश्वरप्रणिधान स्थित होने से समाधि की सिद्धि होती है।
  समाधिसिद्धिरीश्वरप्रणिधानात् (2/45)
- जो शारीरिक स्थिति स्थायी और सुखद हो, वह आसन है।
  स्थिरसुखमासनम् (2/46)
  यथा-पद्मासनं, वीरासनं, भद्रासनं, स्वस्तिकासन, दण्डासनं, सोपाश्रयं, पर्यङ्कं, क्रौञ्चनिषदनं, हस्तिनिषदनमुष्ट्रनिषदनं समसंस्थानं स्थिरसुखं, यथासुखं आदि इसीप्रकार के और भी स्थिर सुख आसन होते हैं।
  आस्यते अनेन इति करणे ल्युट् (आस्+ ल्युट्) आसनम् = बैठने का प्रकार
- स्थिरञ्च तत् सुखञ्चेति स्थिरसुखम् = निश्चल तथा सुखकारी।
  आसनसिद्धि होने पर शीतोष्णादि द्वन्द्वों से बाधा नहीं होती। **ततो द्वन्द्वानभिघातः।** (2/48)
- उस आसनजय के होने पर श्वास और प्रश्वास की गति को रोकना प्राणायाम है।
  'तस्मिन् सति श्वासप्रश्वासयोर्गतिविच्छेदः प्राणायामः' (2/49)
- शरीर के बाहर होने वाला रेचक, भीतर होने वाला पूरक तथा बाहर और भीतर रुकने वाला कुम्भक त्रिविध प्राणायाम देश, समय और संख्या के द्वारा परीक्षित होता हुआ दीर्घ और सूक्ष्म होता है।

बाह्याभ्यन्तरस्तम्भवृत्तिर्देशकालसंख्याभिः परिदृष्टो दीर्घसूक्ष्मः। (2/50)

- उस प्राणायाम की सिद्धि से प्रकाश पर पड़ा हुआ पर्दा क्षीण होता है।
  'ततः क्षीयते प्रकाशावरणम्' (2/52)
- धारणाओं में मन की क्षमता होती है। **धारणासु च योग्यता मनसः** (2/53)
- प्राणायामाभ्यासादेव 'प्रच्छर्दनविधारणाभ्यां वा प्राणस्य' इति वचनात्।
- अपने अर्थात् इन्द्रियों के विषयों के साथ सन्निकर्ष न होने पर इन्द्रियों का चित्त के स्वरूप का अनुसरण सा कर लेना प्रत्याहार है।
  स्वविषयासम्प्रयोगे चित्तस्वरूपानुकार इवेन्द्रियाणां प्रत्याहारः (2/54)
- उस प्रत्याहार से इन्द्रियों की प्रबल वशवर्तिता होती है।
  ततः परमा वश्यतेन्द्रियाणाम् (2/55)
- चित्त के सात्विक वृत्ति को किसी बाहरी या भीतरी प्रदेश में लगाना ही धारणा है।
  देशबन्धश्चित्तस्य धारणा (3/1)
- धारणा वाले विषय में, ध्येयरूप आलम्बन वाले ध्येय पर ही केन्द्रित तथा अन्य ज्ञानों से अस्पृष्ट ज्ञान की अविच्छिन्न तथा अभिन्न धारा ही 'ध्यान' है।
  तत्र प्रत्ययैकतानता ध्यानम् (3/2)
- ध्येय अर्थमात्र को निर्भासित करने वाला अपने (ज्ञानात्मक) रूप से भी रहित-सा ध्यान ही समाधि है। **तदेवार्थमात्रनिर्भासं स्वरूपशून्यमिव समाधिः** (3/3)
  योग के लिये जिन समाधियों की उपयोगिता होती है, वे क्रमशः ये हैं।
  1. योगाङ्गरूपिणी की प्रस्तुतसूत्रोक्तसमाधि
  2. सम्प्रज्ञातसमाधि
  3. असम्प्रज्ञातसमाधि
- **संयम-** ये धारणा, ध्यान और समाधि-तीनों एकत्र अर्थात् एक ही आलम्बनगत होने पर संयम कहे जाते हैं। **त्रयमेकत्र संयमः (3/4)**
  अन्तरङ्ग साधन - यमादि साधनों की अपेक्षा वे धारणा, ध्यान और समाधि सम्प्रज्ञात समाधि के लिये अन्तरङ्ग माने जाते हैं। **त्रयमन्तरङ्गं पूर्वेभ्यः (3/7)**
  संयम भी निर्बीजसमाधि के लिये बहिरङ्ग ही है। **तदपि बहिरङ्गं निर्बीजस्य** (3/8)
- धारणा, ध्यान, समाधि इन तीनों को 'संयम' कहा गया है।
- तीनों परिणामों में संयम करने से योगी को अतीत तथा अनागत का साक्षात्कार होता है। **परिणामत्रयसंयमादतीतानागतज्ञानम् (3/16)**
  संस्कारों में संयम करने के फलस्वरूप प्राप्त साक्षात्कार से पूर्वजन्मों का ज्ञान होता है। **संस्कारसाक्षात्करणात्पूर्णजातिज्ञानम् (3/18)**
- सूर्य में किये गये संयम में समस्त भुवनों का ज्ञान होता है।
  भुवनज्ञानं सूर्ये संयमाद् (3/26)

- बुद्धि और पुरुष के अन्यत्व की ख्याति में ही प्रतिष्ठित चित्त वाले योगी को सभी पदार्थों का स्वामित्व तथा सर्वज्ञत्व सिद्ध होता है।
  सत्त्वपुरुषान्यताख्यातिमात्रस्य सर्वभावाधिष्ठातृत्वं सर्वज्ञातृत्वञ्च (3/49)
- विशोका नाम की सिद्धि है जिसको प्राप्त करके योगी सर्वज्ञ,दग्धक्लेशबन्धन और स्वामी होकर विचरण करता है।
- बुद्धिसत्व और पुरुष की शुद्धि के समान हो जाने पर कैवल्य होता है।
  सत्त्वपुरुषयोः शुद्धिसाम्ये कैवल्यमिति (3/55)
- सिद्धियाँ जन्म, औषधि मन्त्र, तप और समाधि से उत्पन्न होती है।
  जन्मौषधिमन्त्रतपः समाधिजाः सिद्धयः। (4/1)
- अन्यदेहधारणरूपा सिद्धि देवादिनिकायों में जन्म से होती हैं।
- आसुर लोको में औषधियों से अर्थात् रसायन इत्यादि से इसप्रकार की सिद्धि होती है।
- मन्त्रों से आकाश में उड़ना और अणिमादि सिद्धियों की प्राप्ति होती है।
- तप से सङ्कल्प की सिद्धि होती है, जिससे यथेच्छारूप वाला होकर जहाँ तहाँ स्वेच्छा से पहुँचने वाला होता है।
- निर्मीयमाण शरीर में निर्मित होने वाले निर्माण चित्त अस्मिता से ही निर्मित होते हैं।
  'निर्माणचित्तान्यस्मितामात्रात्' (4/4)
- चित्त के कारणभूत अस्मितामात्र को लेकर वह योगी निर्माणचित्तों को तैयार कर देता है। निर्माणकाय चित्तयुक्त हो जाते हैं।
- पाँच प्रकार के चित्त -जन्म, ओषधि, मन्त्र, तपस्या और समाधि में से समाधिसम्पन्न चित्त कर्मक्लेश की वासना से रहित होता है। **तत्र ध्यानजमनाशयम् (4/6)**
- पञ्चविधं निर्माणचित्तम् -
  जन्मौषधिमन्त्रतपः समाधिजाः सिद्धय इति।
  पाँच प्रकार के निर्माणचित्त हुए क्योंकि जन्म, औषधि, मन्त्र, तपस्या और समाधि इन पाँच से ऐसी सिद्धियाँ उत्पन्न होती है।
- कारण (अविद्या) फल (पुरुषार्थ) आश्रय (चित्त) और आलम्बन (विषय) के द्वारा ही उपचित होने के कारण, इन चारों का अभाव होने पर उन वासनाओं का अभाव हो जाता है।
  हेतुफलाश्रयालम्बनैः सङ्गृहीतत्वादेषामभावे तदभावः (4/11)
  हेतु का वर्णन इसप्रकार है - धर्म से सुख और अधर्म से दुःख होता है सुख से राग और दुःख से द्वेष होता है और उस रागद्वेष से प्रयत्न होता है।
- द्रष्टा (पुरुष) और दृश्य (विषयी) से अभिसम्बद्ध सभी विषयों वाला होता है
  द्रष्टृदृश्योपरक्तं चित्तं सर्वार्थम् (4/23)
- चित्त से विविक्त (पुरुष) का साक्षात्कार कर लेने वाले की, आत्मभाव की भावना निवृत्त हो जाती है। **विशेषदर्शिन आत्मभावभावनाविनिवृत्तिः** (4/25)

- योगी का चित्त विवेकमार्गी एवं कैवल्य फलोन्मुख होता है।
  तदा विवेकनिम्नं कैवल्यप्राग्भारं चित्तम् (4/26)
- विवेकख्याति में भी वीतराग (योगी) को सर्वथा विवेकख्याति होने से धर्ममेध समाधि होती है। **'प्रसंख्यानेऽप्यकुसीदस्य सर्वथा विवेकख्यातेर्धर्ममेधः समाधिः।'** (4/29)
- धर्ममेध समाधि से क्लेश और कर्म की निवृत्ति हो जाती है
  ततः क्लेशकर्मनिवृत्तिः (4/30)
  उस समस्त आवरणमलों से रहित ज्ञान के अनन्त हो जाने से श्रेय स्वल्प हो जाता है।
  तदा सर्वावरणमलापेतस्य ज्ञानस्यानन्त्याज्ज्ञेयमल्पम् (4/31)
- धर्ममेध के उदित होने से चित्तरूप सत्वादि तीनों गुणों के परिणाम के क्रम की समाप्ति हो जाती है। **'ततः कृतार्थानां परिणामक्रमसमाप्तिर्गुणानाम्' (4/32)**
- 'क्रम' क्षणप्रतियोगिक तथा परिणाम के पर्यवसान से ज्ञायमान होता है।
  क्षणप्रतियोगी परिणामापरान्तनिर्गाह्यः क्रमः (4/33)
  गुणों के अधिकार (परिणाम) के क्रम की समाप्ति हो जाने पर कैवल्य प्राप्त होता है। उस कैवल्य का स्वरूप निश्चित किया जा रहा है -
  'गुणाधिकारक्रमसमाप्तौ कैवल्यमुक्तम्। तत्स्वरूपमवधार्यते।'
- भोगापवर्गरूपी पुरुषार्थ से रहित सत्त्वादि तीनों गुणो का अव्यक्त में प्रविलीन हो जाना कैवल्य है या चित्तशक्ति का अपने रूप में प्रतिष्ठित हो जाना ही कैवल्य है।
- **'पुरुषार्थशून्यानां गुणानां प्रतिप्रसवः कैवल्यं स्वरूपप्रतिष्ठा वा चितिशक्तिरिति।' (4/34)**

❑❑